'हिन्दी साहित्य के इतिहास का काल विभाजन' काशीनाथ

डॉ० सतीश चन्द्र पाठक

भक्तिकाल या संवत 1375 से संवत 1700 तक का काल हिन्दी साहित्य का स्वर्णकाल था। भावनाओं की श्रेष्ठता, विचारों की उच्चता और अनुभूतियों की तीव्रता की दृष्टि से इस काल की तुलना किसी अन्य काल से संभव नहीं है। वैसे ही काव्यगत दृष्टिकोण, कला एवं भाव पक्ष की उच्चता के साथ ही सामाजिक जीवन की श्रेष्ठता के प्रभाव की दृष्टि से भी यह काल हिन्दी साहित्य का विशिष्टकाल रहा है। वस्तुतः हम कह सकते हैं भक्तिकालीन साहित्य कलात्मक दृष्टि के साथ ही भावनात्मक दृष्टि से भी उच्च अर्थवत्ता का साहित्य रहा है। किन्तु इस साहित्य की कुछ सीमाएं भी हैं - इसने जीवन के आध्यात्मिक पक्ष को इतना अधिक महत्व दे दिया कि समाज का भौतिक पक्ष उपेक्षित रह गया। इसकी प्रतिक्रिया तो सामाजिक स्तर पर होनी ही थी जिसका दर्शन आने वाले साहित्य में स्पष्टतः हमें होते हैं।

भक्तिकाल के बीतते-बीतते या कहें अंतिम चरण में ही काव्य की भक्तिजनित एकरसता से निकलने का प्रयास आरंभ हो गया था इधर राजाश्रय में जीने वाले कवियों की रचनाओं में यह स्पष्ट परिलक्षित हो रहा था कि वर्तमान साहित्य पूर्व के समान नहीं रह गया था। इतने दिनों की भक्ति के विराग के बाद राग सक्रिय हो गया था। धीरे-धीरे साहित्य का स्वरूप बदल रहा था। काव्य में रसिकता, सरसता और चमत्कार प्रदर्शन के प्रति आकर्षण बढ़ रहा था। देखते ही देखते साहित्य का संपूर्ण चरित्र परिवर्तित हो गया। आध्यात्मिक चेतना का न केवल तिरोभाव हुआ वरन कविता पूर्णतः ऐहिक और लौकिक हो गयी। धीरे-धीरे कविता एक ढर्रे पर चल निकली। नायिकाओं की परिभाषा कविता में ही प्रस्तुत की जाने लगी और उसका उदाहरण भी कविता में ही प्रस्तुत होने लगा। इस विशिष्ट शैली की कविता समाज के प्रबुद्ध वर्ग को खूब भाने लगी। इसी प्रकार अनेक

		10	17	24
Thursday	4	11	18	25
Friday	5	12	19	26
Saturday	6	13	20	27
Sunday	7	14	21	28

ग्रंथों की रचना होने लगी जिन्हें रीति ग्रंथ के नाम
से जाना गया। देव, मतिराम, केशवदास, भूषण
साहित्यकारों ने इस नवीन काव्य चेतना को खूब सींचा।
नायिकाओं की सूक्ष्मातिसूक्ष्म विवेचना से साहित्य भर गया
वैसे ही ~~रस~~, रस, अलंकार, छन्द, शब्दशक्ति, काव्यांग
इत्यादि ~~की~~ का खूब विश्लेषण हुआ। एक तरह से
लगा कि कविजन साहित्य के अंग-उपांगों का
विवेचन विश्लेषण कर रहे हैं किंतु इसके भीतर सिर्फ
दैहिक मांसल सौन्दर्य का वर्णन होने लगा। साहित्य में
अश्लीलता का ~~[illegible]~~ प्रवेश छद्मावरण से हो गया।
चूंकि एक लम्बे अंतराल के बाद कवियों को राजाश्रय
में खुलकर खेलने का मौका मिला था अतः सब के सब
साहित्य के माध्यम से सामाजिक और नैतिक मानदंडों
की सीमा का अतिक्रमण करने में भी संकोच नहीं किया।
साहित्यकारों का दूसरा वर्ग यद्यपि काव्यांग
विवेचन में तो नहीं लगा किंतु नारी के रूप वर्णन तथा
संयोगशृंगार वर्णन में तल्लीनता से लगा रहा। इसके लिए उसे
राजाश्रय से पुरस्कार भी प्राप्त होते रहे। तात्पर्य यह
कि भक्तिकाल के बाद साहित्य का स्वर संपूर्ण रूप से
बदल गया और लेखन में राजाश्रय या राजा की कृपा
प्राप्ति पर जोर रहा। यही कारण है कि इस काल का
साहित्य जन सामान्य से दूर ही रहा। इस साहित्य में
लोक हित की पूर्णतः उपेक्षा हुयी है। तत्कालीन समाज में
क्या चल रहा था इसका कोई संकेत इस साहित्य में
प्राप्त नहीं होता। यह जनसामान्य से कटा हुआ साहित्य था
या कहें ढर्रे पर रचा जा रहा था। चूंकि इस काल का साहित्य एक विशेष रीति
काल के नाम से अभिहित किया गया। ~~इस~~ इसलिए इसे रीति
रीति का, जो कि एक काव्यांग है साहित्य शास्त्र में